e-ISSN: 2319-8753 | p-ISSN: 2347-6710

IJIRSET
International Journal of Innovative Research in
SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

Volume 10, Issue 10, October 2021

INTERNATIONAL
STANDARD
SERIAL
NUMBER
INDIA

Impact Factor: 7.569

9940 572 462 | 6381 907 438 | ijirset@gmail.com | www.ijirset.com

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 10, Issue 10, October 2021 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2021.1010107|

हिंदी के भक्तिकाव्य में संत महिमा का रहस्य

डॉ० श्याम पाल मौर्य
प्रभारी एवं एसोसिएट प्रोफ़ेसर
हिंदी विभाग,
बरेली कॉलेज,बरेली,उत्तर प्रदेश।

कविकुल शिरोमणि सूरदास ने संत-मिलन की महिमा का रहस्य प्रकट करते हुए अद्भुत भावांजलि व्यक्त की है-

जा दिन संत पाहुने आवत।
तीरथ कोटि सनान करैं फल जैसौ दरसन पावत।
नयौ नेह दिन-दिन प्रति उनकै चरन-कमल चित लावत।
मन-बच-कर्म और नहिं जानत, सुमिरत औ सुमिरावत।
मिथ्याबाद-उपाधि-रहित ह्वै, विमल-विमल जस गावत।
बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत।
संगति रहैं साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत।
सूरदास संगति करि तिनकी, जे हरि-सुरति करावत।। [1]

मानव मन जब संत को अपने जीवन में अभ्यागत की भाँति श्रद्धा विश्वास और प्रीति सहित मिलता है तो केवल उसके दर्शन मात्र से करोड़ों तीर्थ स्नान के स्नान से भी अधिक लाभ प्राप्त करता है। संत प्रतिदिन प्रभु के प्रति नवीन नवीन प्रेम करता है। मन-वचन-कर्म से उसकी सम्पूर्ण प्रवृत्ति प्रभु के प्रति होती है, वह स्वयं भी स्मरण करता है और दूसरों को भी कराता है। सर्वात्मना समर्पित संत के सभी संकल्प सिद्ध होते हैं। मन-वचन-कर्म की एकीभूत भक्ति की प्रेम ज्वाला में पूर्वजन्म के कर्म भी दग्ध हो जाते हैं; भक्त भगवान से अभिन्न स्वरूप प्राप्त कर लेता है। इसी परम अवस्था हरिस्मरण के अतिरिक्त उसके जीवन का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता है। सारे मिथ्या मोह समाप्त हो जाते हैं। वह बाह्य उपाधि रहित होकर विचरण करता है। प्रेमाद्वैत की दुर्लभ स्थिति में वह 'ब्रह्मविदाप्नोति परम्' का साकार मूर्ति हो जाता है। उसके स्वयं के कर्म तो कट ही जाते हैं जो उसका सानिध्य पाता है उसका भी परम कल्याण हो जाता है। परमात्मा के इस प्रकार भक्ति और ज्ञान का फल कहा गया है।

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ [2]

भगवान कृष्ण स्वयं अपने मुखारविन्द से कहते हैं -

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥ [3]

भगीरथ भगवती गंगा के पृथ्वी पर अवतरित होने को मना करने पर कहते हैं-

साधवो न्यासिनः शान्ता ब्रह्मिष्ठा लोकपावनाः।
हरन्त्यघं तेऽङ्गसङ्गात् तेष्वास्ते ह्यघभिद्धरिः।। [4]

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 10, Issue 10, October 2021 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2021.1010107|

ऐसे लोकपावन संत स्वयं तीर्थभूत होते हैं और संस्पर्श से तीर्थों को भी तीर्थत्व प्रदान कर देते हैं :-

भवद्विधा भागवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो ।
तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता ॥ [5]

गोस्वामी तुलसीदास भी ऐसे महापुरुषों के लवमात्र के सत्संग को भी स्वर्ग मोक्षादि से भी श्रेष्ठ बताते हैं -

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।। [6]

ब्रह्म, जीव माया व जगत का यथार्थ ज्ञान सद्गुरू संत के बिना नहीं हो सकता। अनन्त जन्मों के अन्तिम जन्म में ज्ञानवान संत इस सौभाग्यको प्राप्त कर पाता है। ज्ञान प्राप्त करके वह परम शान्ति को शीघ्र प्राप्त कर लेता है। अब वह सदा सर्वत्र एक भगवान की दिव्य सन्निधि का अनुभव करता है।

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।। [7]

किसी तत्त्वदर्शी और श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष को हिन्दी भक्तिकाव्य में संत, भक्त, ज्ञानी, जन, महात्मा, सद्गुरु, गुरु, तत्त्वदर्शी आदि अनेक नामों से पुकारा गया है। सभी से तात्पर्य भगवत्प्राप्त महापुरुष से ही है। भगवान श्रीकृष्ण ऐसे दिव्य महापुरुषों को आत्मोद्धार के प्रणिपात पूर्वक सेवन करने के लिए कहते हैं-

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।। [8]

कठोपनिषद में ऐसे अनुभवसिद्ध ज्ञानी के विषय में कहा गया है कि ईश्वरप्राप्ति के दुर्गम मार्ग को केवल और केवल वे ही बता सकते हैं और तत्त्व की उपलब्धि भी वही करा सकते हैं -

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति ॥ [9]

एक दिव्य पक्षी आकाश में उड़ रहा है। लेकिन उसको पकड़ने, प्राप्त करने के लिए पक्षी को पकड़ने की विद्या के पारंगत की आवश्यकता होती है। जो मार्ग का अनुभव किये हुए होता है वही लक्ष्य तक ले जाने में समर्थ होता है। भगवान को प्राप्त करना सरल है किन्तु भगवत्प्राप्त महापुरुष का मिलना कठिन है। बिना पुण्य की पूर्व सम्पदा के यह सौभाग्य संभव नहीं होता। यह सौभाग्य मिलते ही सब कुछ मिल जाता है।

पुण्यपुंज बिनु मिलइ न संता।
सतसंगति संसृति कर अंता।।

भगवान की कृपा से संत और सन्तों की कृपा से भगवान मिलते हैं। बिन्दु जी कहते हैं

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 10, Issue 10, October 2021 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2021.1010107|

जो तू चाहे कि हो घनश्याम की
तुझ पर नजर पहले ।
तो उनके आशिकों की
खाक-ए-पा में कर गुजर पहले ॥ [10]

भगवान और भगवान की माया का रहस्य (भेद) बिना भेदिया के नहीं प्राप्त होता-

भेदी लीना साथ में, वस्तु दई लखाय।
कोटि जन्म का पंथ था, पल में पहुंचा जाय।। [11]

शीशमहल का राज अनुभवी ही बता पाता है। बिना गुरू के कोटि उपाय करने पर भी तत्त्व को कोटि जन्म में भी नहीं पाया जा सकता। इसीलिए कबीर कहते हैं -

सिष तो विष को बेलरी गुरु अमृत की खान।
सीस दिये जौ गुरु मिलें तो भी सस्ता जान ।।

शीश देने से तात्पर्य है कि संत सद्गुरू को आप जब तक पूर्ण समर्पण नहीं करेगें तब तक आपकी अपनी बुद्धि ही लक्ष्य की बाधक बनी रहेगी। इसीलिए संत सद्गुरू को मृत्यु कहा जाता है। शिष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समाप्त कर उसे अपने ज्ञान और भक्ति के गर्भ में रखकर नवीन जन्म देता है इसी लिए गुरु माता भी है। कबीर कदाचिद इसीलिए कहते हैं-

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
सीस उतारे कर धरै तो पैठे घर माँहि।।

महाकवि सूरदास सद्गुरू की महिमा के कारण बताते हैं-

अपुनपौ आपुन ही मैं पायौ।
सब्दहि सब्द भयौ उजिवारौं, सतगुरु भेद बतायौ।।
ज्यौं कुरंग-नाभी कस्तूरी, ढूँढ़त फिरत भुलायौ।
फिरि चितयौ जब चेतन ह्वै करि अपने ही तन छायौ।।
राजकुमारि कंठ-मनि-भूषन भ्रम भयो कहूँ गँवायौ।
दियौ बताइ और सखियनि तब, तनु कौ ताप नसायौ।।
सपने माहिं नारि कौं भ्रम भयौ, बालक कहूँ हिरायौ।
जागि लख्यौ, ज्यौं को त्यौ ही है, ना कछु गयौ न आयौ।।
सूरदास समुझे की यह गति, मनहीं मन मुसुकायौ।
कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौं गूँगै गुर खायौ।। [12]

गुरू ब्रह्मा के समान सर्जन, विष्णु की भाँति पालन और शंकर की भाँति अज्ञान का नाश करता है। संत के दर्शन से पाप इसलिए काटते हैं कि सन्त माया के भ्रम को हटा देता है इसीलिए मायाजन्य राग द्वेष समाप्त हो जाते हैं। पाप और पुण्य मन की कल्पना मात्र है। संत स्वयं तत्त्व स्वरूप होता है। तत्त्व की अपरोक्ष उपलब्धि जीव के समस्त बाध्यकारी तत्त्वों को समाप्त कर देती है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 10, Issue 10, October 2021 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2021.1010107|

सन्त दरस जिमि पातक टरई । [13]

तीर्थ, यज्ञ, जप, तप और वेदाध्ययन भी वह नहीं कर सकते जो अनुभवी संत कर सकता है।

कविवर बिहारी लाल भी यही बात एक सुन्दर उदाहरण द्वारा कहते हैं -

अजौं तरयौना ही रह्यौ श्रुति सेवत इक-रंग।
नाक-बास बेसरि लह्यौ बसि मुकुतनु कैं संग॥ [14]

गोस्वामी तुलसीदास भी बहुत समीचीन कहते हैं

मुद मंगल मय संत समाजू।
जो जग जंगम तीरथ राजू।।

उन्होने और भी सहज स्वीकार कर संत महिमा का बखान किया है -

मति कीरति गति भूति भलाई।
जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ।
लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।
बिनु सतसंग बिबेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।
सतसंगत मुद मंगल मूला।
सोइ फल सिधि सब साधन फूला।।
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई।
पारस परस कुधात सुहाई।। [15]

'मानस' के उत्तरकाण्ड में रहस्य उद्‌घाटित कर तुलसीदास जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति में सन्त संग को ही मुख्य माध्यम मानते हैं। जीवन भर यदि यथेष्ट ज्ञान न मिले तो संशय बना रहता है। भगवत्प्राप्त महापुरुष के यहाँ प्रभु को संशय विहगों को उड़ाने वाली कथा, तत्त्वज्ञान, भक्ति भरी प्रभु की गुणगाथा और लीला सुनकर समस्त व्याधियों का मूल-'मोह' सहज ही नष्ट हो जाता है।

तबहिं होई सब संशय भंगा।
जब बहु काल करिअ सत्संगा।।
बिनु सत्संग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु रामपद, होइ न दृढ़ अनुराग ।।
मिलहि न रघुपति बिनु अनुरागा।
किए जोग तप ग्यान विरागा।। [16]

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 10, Issue 10, October 2021 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2021.1010107|

भगवान राम नवधा भक्ति वर्णन करते हुए संत को अपने से भी ऊँचा स्थान देते हैं।

सप्तम सब जग मोहिं मय देखा।
मोते अधिक संत कर लेखा।।

ऐसे अनिर्वचनीय भक्तों के विषय में एक बड़ी ऊँची बात कही गयी है -

हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहि ठौर।।

संतों को शास्त्रों ने भगवान का नित्यावतार कहा है-
श्रीमद्भागवत में स्वयं श्रीभगवान अपने प्यारे भक्तों के विषय में कहते हैं -

निरपेक्षं मुनि शांतं निर्वैरं समदर्शनम्।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यंघ्रि-रेणुभिः।। [17]

संदर्भ

1). सूरसागर - द्वितीय स्कन्ध- 17/360
2). मुण्डकोपनिषद् - मुण्डक- 2/ खंड-2 /8
3). श्रीमद्भगवद्गीता - १०/९
4). श्रीमद्भगवद्गीता- ९/९/६
5). श्रीमद्भागवद- 1/13/10
6). श्रीरामचरितमानस-सुन्दरकाण्ड-4
7). श्रीमद्भगवद्गीता- 7.19
8). श्रीमद्भगवद्गीता - 4.34
9). कठोपनिषद- वल्ली- 3/1/14
10). विंदु जी- मोहन मोहिनी
11). कबीर गन्थावली
12). सूरसागर- 4/13
13). श्रीरामचरितमानस - किष्किन्धाकाण्ड- 1.4.17
14). बिहारी रत्नाकर - 20
15). श्रीरामचरितमानस- बालकाण्ड - 3
16). श्रीरामचरितमानस- उत्तरकाण्ड - 6
17). श्रीमदभागवत - 11/14/16

INNO SPACE

SJIF Scientific Journal Impact Factor

Impact Factor: 7.569

doi crossref

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com

Scan to save the contact details